



Neutral Citation No. - 2026:AHC:61883

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

बीएनएसएस की धारा 528 के तहत आवेदन संख्या - 51035/2025

रोहित गुप्ता

.....आवेदक

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

.....प्रतिवादी

आवेदक के अधिवक्ता : अमरनाथ त्रिपाठी

प्रतिवादी के अधिवक्ता : बृज भूषण उपाध्याय, जी.ए.

न्यायालय संख्या- 74

माननीय न्यायमूर्ति दीपक वर्मा

1. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता, विपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए विद्वान ए.जी.ए. को सुना।
2. वर्तमान 528 बीएनएसएस आवेदन, वाराणसी के अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, न्यायालय संख्या 08 की न्यायालय द्वारा मामला संख्या 4342 वर्ष 2024 में 29.09.2025 को पारित समन आदेश, और साथ ही थाना सिगरा, जिला- वाराणसी में एन.आई. एक्ट की धारा 138 के तहत दर्ज केस नंबर 4342 वर्ष 2024 (अमित गुप्ता बनाम रोहित गुप्ता) की संपूर्ण परिणामी कार्यवाही को रद्द करने के लिए दायर किया गया है, जो अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कोर्ट नंबर 08, वाराणसी की न्यायालय में लंबित है।

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



3. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता का कहना है कि शिकायत में यह आरोप लगाया गया है कि आवेदक और विपक्षी नंबर 2 सगे भाई हैं। कहा गया है कि आवेदक ने विपक्षी नंबर 2 से पैसे उधार लिए थे और जब उन्हें चेक के ज़रिए वापस किया गया, तो चेक बाउंस हो गया। यह शिकायत सुनवाई के लायक नहीं है क्योंकि इसमें देनदारी के बारे में कोई बात नहीं कही गई है और आवेदक ने विपक्षी नंबर 2 के पक्ष में कोई चेक जारी नहीं किया था। शिकायत में लगाया गया आरोप झूठा और बेबुनियाद है और इसके समर्थन में कोई ठोस सबूत नहीं है। मजिस्ट्रेट द्वारा समन जारी करना बिना न्यायिक सोच-विचार के किया गया है। शिकायत की सामग्री और बीएनएसएस की धारा 223 के तहत दर्ज बयान को देखने पर, कथित धारा के तहत कोई अपराध नहीं बनता है। इसके अलावा, आवेदक ने समन जारी करने के संबंध में BNSS की धारा 223 के प्रावधानों के तहत कोई आपत्ति दर्ज नहीं कराई है। चेक आवेदक द्वारा नहीं भरा गया था, बल्कि विपक्षी नंबर 2 ने इसे अपने पिता के पास से चुराया था, खुद भरा था और बैंक में पेश किया था। आवेदक ने कभी भी विपक्षी नंबर 2 को पैसे निकालने के लिए चेक नहीं दिया था। साथ ही, उन्होंने इस कोर्ट की एक अन्य बेंच द्वारा आवेदन संख्या 10390/2024 (प्रतीक अग्रवाल बनाम यूपी राज्य, अतिरिक्त मुख्य सचिव, गृह विभाग, लखनऊ और अन्य) में धारा 223 की कार्यवाही के संबंध में दिए गए फैसले का हवाला दिया; लेकिन यह तर्क स्वीकार्य नहीं है क्योंकि वह फैसला आईपीसी की धारा 302 और 328 के तहत आपराधिक कार्यवाही में दिया गया था।

4. इसके विपरीत, विरोधी पक्ष संख्या 2 के अधिवक्ता ने आवेदक के विद्वान अधिवक्ता की दलील का विरोध करते हुए कहा कि आवेदक और विरोधी पक्ष संख्या 2 सगे भाई हैं और एक बिज़नेस डील के कारण आवेदक ने विरोधी पक्ष संख्या 2 को विवादित चेक दिया था, जो बाउंस हो गया; इसलिए,

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



प्रथम दृष्टया आवेदक के खिलाफ अपराध बनता है। धारा 138 के तहत कार्यवाही और धारा 223 के प्रावधान यहाँ लागू नहीं होते हैं।

5. आवेदक के अधिवक्ता की दलील पर विचार करते हुए, शिकायत की बातों से यह स्पष्ट है कि प्रथम दृष्टया आवेदक के खिलाफ अपराध बनता है। आवेदक और विरोधी पक्ष संख्या 2 सगे भाई हैं और उन्होंने बिज़नेस शुरू किया था जिसमें दोनों पार्टनर थे। बिज़नेस के लेन-देन में, आवेदक ने विरोधी पक्ष संख्या 2 को विवादित चेक दिया था जो बाउंस हो गया; इसलिए, प्रथम दृष्टया आवेदक के खिलाफ अपराध बनता है। धारा 225 के प्रावधान के तहत मौका दिए जाने के आवेदक के दावे की कोई आवश्यकता नहीं है। यह माना गया है कि विवादित चेक पर आवेदक के हस्ताक्षर हैं जो विरोधी पक्ष संख्या 2 को दिया गया था और वह बाउंस हो गया था, इसलिए, इसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

6. माननीय शीर्ष न्यायालय ने **श्री ओम सेल्स बनाम अभय कुमार उर्फ अभय पटेल व अन्य (2025 एससीसी ऑनलाइन एससी 2897)** में निम्नलिखित फैसलों पर विचार किया है:

"14. मारुति उद्योग लिमिटेड बनाम नरेंद्र और अन्य के मामले में, इस कोर्ट ने माना कि यह मान लेना चाहिए कि चेक रखने वाले को धारा 138 में बताई गई प्रकृति का चेक किसी कर्ज या अन्य देनदारी को चुकाने के लिए मिला था, जब तक कि इसके विपरीत साबित न हो जाए। इसलिए, हाई कोर्ट का कार्यवाही के शुरुआती चरण में आरोपी की दलील पर विचार करना और उसे स्वीकार करके शिकायत को रद्द करना सही नहीं था।

15. इसी तरह, रंगाप्पा बनाम श्री मोहन मामले में यह माना गया कि एन.आई. एक्ट की धारा 139 के तहत ज़रूरी माने जाने वाले अनुमान में कानूनी रूप से लागू करने योग्य कर्ज या देनदारी का होना

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



शामिल है। यह देखा गया कि ऐसे अनुमान को गलत साबित किया जा सकता है, और आरोपी को मुकदमे के दौरान अपना बचाव पेश करना होगा।

16. राजेशभाई मुलजीभाई पटेल बनाम गुजरात राज्य मामले में यह माना गया कि हाई कोर्ट को एन.आई. एक्ट की धारा 138 के तहत आपराधिक शिकायत को इस आधार पर रद्द नहीं करना चाहिए कि चेक कर्ज या देनदारी चुकाने के लिए जारी किया गया था या नहीं, क्योंकि यह तथ्यों से जुड़ा विवादित सवाल है। खासकर तब, जब एन.आई. एक्ट की धारा 139 इस बात का कानूनी अनुमान लगाती है कि चेक कर्ज या देनदारी चुकाने के लिए जारी किया गया था।

7. रतीश बाबू उन्नीकृष्णन बनाम स्टेट (एनसीटी ऑफ दिल्ली) में, इस न्यायालय ने माना कि जब एन.आई. अधिनियम की धारा 139 के तहत कानूनी उपधारणा होती है, तो शिकायत को रद्द करने के लिए मुकदमे से पहले के चरण में तथ्य के विवादित प्रश्न पर विस्तृत जांच करना उचित नहीं होगा। निर्णय में प्रासंगिक टिप्पणियाँ नीचे उद्धृत की गई हैं:

“17. उपरोक्त कानूनी सिद्धांत यह स्पष्ट करता है कि न्यायालय को मुकदमे से पहले के चरण में शिकायत को रद्द करने की राहत देने में सतर्कता बरतनी चाहिए, विशेष रूप से तब जब तथ्यों को लेकर विवाद की गुंजाइश हो, जैसा कि इस मामले में कानूनी धारणा के कारण है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि बिना कोई साक्ष्य प्रस्तुत किए तथ्यात्मक बचाव इतना अकाट्य होना चाहिए कि शिकायत में लगाए गए आरोपों को पूरी तरह से खारिज कर सके।

18. ट्रायल शुरू होने से पहले ही आपराधिक प्रक्रिया को रोकने के नतीजे गंभीर और कभी न सुधारे जा सकने वाले हो सकते हैं। शुरुआती स्टेज पर ही कार्यवाही को रद्द करने से मामला बिना सबूत पेश किए ही खत्म हो जाएगा, और इसका नतीजा यह होगा कि सही फोरम, यानी ट्रायल कोर्ट, अहम

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



सबूतों पर विचार करने से वंचित रह जाएगा। अगर ऐसा होने दिया गया, तो आरोपी को आपराधिक प्रक्रिया में अनुचित लाभ मिल सकता है। साथ ही, कानूनी धारणा के कारण, जब अपीलकर्ता चेक और हस्ताक्षर पर कोई विवाद नहीं करता है, तो इस स्टेज पर सुविधा का संतुलन शिकायतकर्ता/अभियोजन पक्ष के पक्ष में होता है, क्योंकि आरोपी को ट्रायल के दौरान उस धारणा को गलत साबित करने के लिए बचाव में सबूत पेश करने का मौका मिलेगा।

19. ऐसी परिस्थिति में, समन जारी होने के समय ही शिकायतकर्ता के मामले को रद्द कर देना, जबकि ट्रायल कोर्ट को अभी तथ्यों के विवाद पर विचार करना है, हमारी राय में सही नहीं होगा। प्रथम दृष्टया देखने पर, यहाँ आपराधिक पहलू की संभावना से पूरी तरह इंकार नहीं किया जा सकता, जो कि ट्रायल कोर्ट के अंतिम फैसले पर निर्भर करेगा। इसलिए, कार्यवाही के शुरुआती दौर में ही आपराधिक प्रक्रिया को रोकना उचित नहीं है।”

8. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ऊपर बताए गए मामले का फैसला करते हुए, पैराग्राफ 13 और 18 में यह कहा है कि:

“13. हालाँकि, हाई कोर्ट ने धारा 482 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का इस्तेमाल करते हुए यह जांचने की कोशिश की कि क्या चेक किसी कर्ज या अन्य देनदारी को पूरी तरह या आंशिक रूप से चुकाने के लिए जारी किया गया था। हमारी राय में, ऐसा करना ज़रूरी नहीं था क्योंकि N.I. एक्ट की धारा 139 के तहत यह माना जाता है कि चेक रखने वाले को धारा 138 में बताए गए प्रकार का चेक किसी कर्ज या अन्य देनदारी को पूरी तरह या आंशिक रूप से चुकाने के लिए मिला था। इस धारणा को ट्रायल के दौरान पेश किए गए सबूतों से गलत साबित किया जा सकता है। और तो और, इस

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



मुद्दे पर सही तरीके से फैसला या तो ट्रायल के दौरान या बाद में, ट्रायल खत्म होने पर, अपीलीय/रिविजनल कोर्ट द्वारा किया जा सकता है।"

"18. इस कोर्ट के पहले के फैसलों और एन.आई. अधिनियम की धारा 139 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि हाई कोर्ट ने ट्रायल से पहले ही इस बात की विस्तृत जांच करके गलती की कि क्या चेक किसी कर्ज या देनदारी को चुकाने के लिए जारी किया गया था। हमारी राय में कोड की धारा 482 के तहत मिली शक्तियों का इस्तेमाल करते हुए ऐसी जांच करना सही नहीं था, खासकर तब जब शिकायत के आरोपों से यह पता चलता हो कि चेक देनदारी चुकाने के लिए ही जारी किया गया था। चूंकि शिकायत के आरोपों से एन.आई. अधिनियम की धारा 138 की ज़रूरी शर्तें पहली नज़र में पूरी होती दिखती हैं, इसलिए हमारी राय में, हाई कोर्ट को ट्रायल से पहले न तो समन जारी करने का आदेश रद्द करना चाहिए था और न ही शिकायत को खारिज करना चाहिए था।"

9. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संजाबीज तारी बनाम किशोर एस. बोरकर व अन्य, 2025 एससीसी ऑनलाइन एससी 2069 में, निम्नलिखित निर्णयों पर विचार किया है:

"E. हाल ही में, कर्नाटक हाई कोर्ट ने 'अशोक बनाम फयाज़ अहमद' (2025 SCC OnLine Kar 490) मामले में यह राय दी है कि चूंकि NI एक्ट एक विशेष कानून है, इसलिए एनआई अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर शिकायतों का संज्ञान लेने से पहले बीएनएसएस की धारा 223 के तहत मजिस्ट्रेट के लिए आरोपी को समन जारी करने की कोई ज़रूरत नहीं है। यह कोर्ट कर्नाटक हाई कोर्ट की इस राय से सहमत है। नतीजतन, यह कोर्ट निर्देश देता है कि बीएनएसएस की धारा 223 के

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



तहत, यानी संज्ञान लेने से पहले के चरण में, आरोपी को समन जारी करने की कोई आवश्यकता नहीं होगी।"

10. सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के आलोक में, इस न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। तदनुसार, वर्तमान आवेदन **खारिज** किया जाता है।"

(न्यायमूर्ति दीपक वर्मा)

25 मार्च 2026

नितिन वर्मा

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"